अभिमत

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी

मनोज श्रीवास्तव

आशी जी ने 'कालरात्रि' के नाम से यह जो नाटक लिखा है, उसे उन्होंने एक नाइटमेअर के रूप में वर्णित किया है। अभी कल ही अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिका टाइम का जो अंक आया है उसमें इसे इंडियाज नाइट आफ डेथ के रूप में वर्णित किया गया है। बी.बी.सी. ने अ नाइट इन भोपाल के नाम से भोपाल त्रासदी पर फिल्म भी बनाई। सो वे सब कालरात्रि या मौत की रात के इस मेटाफर के अनुसार ही हैं लेकिन मैं सोच रहा था कि कालरात्रि तो दुर्गा के सातवें अवतार का भी नाम है। कलकत्ता में उनका एक प्रसिद्ध मंदिर भी है। उन्हें आकस्मिक मृत्यु की वेदनाओं से मुक्त करने वाली देवी कहा भी जाता है। 2-3 दिसम्बर की मध्यरात्रि को, जब निरीह लोगों के ड्रीम्स अचानक नाइटमेअर में बदल गए-औद्योगिक इतिहास में आकस्मिकता का ऐसा वज्राघात कभी न देखा गया- तब वह कृष्णा कालरात्रिभयंकरी एक नए स्वरूप में प्रत्यक्ष तो नहीं हुई? वह जो पापनाशिनी थी, उस दिन वह निरीहों के नाश की साक्षी कैसी बनी रही? कालरात्रि का कलियुग में यह अर्थ- विपर्यय कैसे हो गया? अपने इस नाटक में आशी जी एक ऐसे ही विपर्यय की ओर संकेत करते हैं जब देवता और दानव में कन्फ्यूज़न हो गया है। आज औद्योगिक प्रगति, रासायनिक खेती, बहुराष्ट्रीय निगम नए युग के देव-देवी हैं। हमारा संभ्रम बढ़ गया है।

जिस तरह से देवी कालरात्रि का पौराणिक अधिष्ठान सत्यलोक बताया गया है, आशी जी का यह नाटक कालरात्रि भी हमें इस युग के सत्य का साक्षात्कार कराता है। आधुनिक समय में माया स्मोक नहीं, स्मोग है। वह स्मोग जो दो-तीन दिसंबर की रात भोपाल में छाया था। यह धुएं का एक घेरा कि मैं जिसमें रह रहा हूं/ मुझे किस क़दर नया है मैं जो दर्द सह रहा हूं/ धुंए का घेरा अब एक तरह का स्मोकी फॉग है : ग्राउंड लेवल ओज़ोन, सल्फर डायोक्साइड, नाइट्रोजन डायोक्साइड, कार्बन मोनोक्साइड, मिथाइल आइसोसाइनेट और फास्ज़ीन की समकालीनता। क्या फास्जीन इंडस्ट्रियल फासिज्म का प्रतीक बनकर उस रात आई थी? शेक्सपीयर का एक पात्र कहीं कहता है : इल ब्लोज़ द विंड दैट प्राफिट्स नो बडी- वह हवा बेकार है, बदज़ात है जिससे किसी को फायदा नहीं होता। लेकिन यहां तो फायदा नहीं करने वाली नहीं, नुकसान पहुंचाने वाली, डेथ और इंजुरी लाने वाली हवा बही। पवनपुत्र के देश की पवन। न्यूयार्क में तो 1953, 1963 और 1966 में स्मोग से क्रमशः 260, 200, और 169 लोग मरे थे लेकिन मारूति की पूजा करने वाले देश में उनकी आराधना के भी सही अर्थ न समझे जाएंगे, यह किसने सोचा था। यदि एयर पाल्यूशन है तो वायुपुत्र का निरादर हो ही रहा है। एयर क्वालिटी इन्डेक्स गिरता रहे और पवनपुत्र के चरणों में फूल चढ़ते रहें- यह हमारे समय की फोटोकेमिकल आध्यात्मिकता है।

मुझे वह रात अच्छी तरह से याद है। मैं उस वक्त जबकि रात के करीब एक बज रहे होंगे, जागा हुआ था। अगली सुबह मुझे सिविल सर्विस का पेपर देना था। अचानक जब मेरी आंखों से आंसू झरने लगे तो मुझे लगा कि पिछली तीन रातों से जो मैं लगातार जाग रहा हूं- यह उसी डेफिसिट ऑफ स्लीप का परिणाम है। मैंने आंखों पर पानी के छींटे भी मारे, लेकिन आंसू फिर बहने लगे तो मैंने अपनी मां को जगाया। वे खुद उठकर अपनी आंखों पर पानी के छींटे मारने बाथरूम गईं तब उन्होंने बाहर छाया हुआ वह फॉग, वह व्हाइट हेज़ स्काई का वह कलरेशन देखा और नगर निगम वालों को कोसा कि मच्छर मारने की दवा ज्यादा ही डाल गए मुए। वह तो अगले ही दिन पता चलना था कि भोपाल की गलियों में लोग मच्छरों की तरह मारे गए। मृत्यु की भी अपनी प्रवंचनाएं होती हैं और गुलज़ार जी के लिखने और अमिताभ की आवाज़ के बावजूद मौत हमेशा एक कविता नहीं होती। खास तौर पर दैट नाइट वैन पीपुल वर बिज़ी डाइंग।

लुई मैक्मास्टर का कहना है : The dead cannot cry out for justice; it is a duty of the living to do so for them. कि मरे हुए लोग न्याय के लिए नहीं चीत्कार कर सकते, यह तो जीने वालों की जिम्मेदारी है कि उनके लिए कम से कम इतना तो करें। जो 2165 लोग उस वक्त मारे गए, जो 20,000 लोग विकिपीडीया के अनुसार अब तक क्रमशः मर चुके : क्या उन्हें हम न्याय दिला पाए? मुझे उन एक लाख 20 हजार क्रॉनिकली इल सर्वाइवर्स का भी ध्यान है जो एक तरह के Quiet desperation में रह रहे हैं। ICMR की एक रपट कहती है कि उस दिन 5,20,000 लोगों की ब्लडस्ट्रीम में जहर घुल गया था। आशी जी पौराणिकी के मिथक को इस दौर की वास्तविकता से टकराते हैं कि जब ज़हर देवताओं के नसीब आता है। देवदूतों की निश्छल, निर्दोष, मासूम लोगों की सांसों में उस भीषण रात ज़हर ही उतर गया था। वे नहीं मारे गए जो समृद्धि के विद्रूप वाली ऐशगाहों मे थे, वे मारे गए जो कड़कती ठंड में भी फुटपाथों और झोंपड़ियों में सोते हैं। खुले आकाश के नीचे जो शीतलहर में नहीं मरते, वे MIC के बगूले से मर गए।

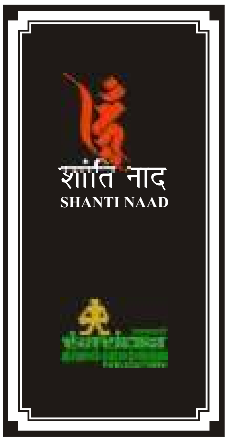

मैं न्याय की बात कर रहा था। उस दौर में मैंने अखबारों को केमिकल रिएक्शन की चर्चा करते हुए देखा, पर बात तो उस कैपिटलिस्ट रिएक्शन की थी। अब तो मैं स्वयं पब्लिक रिलेशन्स में हूं, लेकिन उस समय मैंने देखा आर्थर डी. लिटिल नामक एक पी आर फर्म का करिश्मा, जिसने अपने इंडिपेंडेंट इन्वेस्टीगेशन के जरिए एक रिपोर्ट तैयार की जिसमें इसे एक असन्तुष्ट कर्मचारी के सेबोटेज का नतीज़ा बताया गया। आज भी यूनियन कार्बाइड की वेबसाइट www.bhopal.com पर "स्वतंत्र अनुसंधान" के रूप में दर्शाई गई यह रपट लटकी मिलेगी। लेकिन इस फर्म को रपट बनाने के लिए पैसे यूनियन कार्बाइड ने दिए थे। पैसा देकर अनुसंधान खरीदना पश्चिमी बहुराष्ट्रीय कंपनियों का एक मनपसंद शगल माना जाता है। तो यह भोपाल गैस त्रासदी का सम्पूर्ण प्रसंग केमिकल रिएक्शन के अध्ययन की चीज हो न हो, यह पूंजी-प्रतिक्रियाओं के अध्ययन की चीज़ अवश्य है। मैंने तीन दिसंबर को परीक्षा से लौटकर स्थानीय अखबारों के लिए जो लेख लिखा, उसमें भी मैंने विकास के ऐसे मॉडेल से अवश्यंभावी हुई परिणतियों की चर्चा की थी।

लेकिन क्या इसका अर्थ एक सर्वव्यापी दोषारोपण की टेक्नीक अपनाकर अपराध को केन्द्र से भटका देना है? तब पूछना पड़ता है कि यदि बेअर जैसी कंपनी ज्यादा खर्चा, ज्यादा लागत लगाकर उन्हीं दिनों MIC की सहायता के बिना सेविन नामक पेस्टिसाइड बना रही थी तो यूनियन कार्बाइड ने ऐसा क्यों नहीं किया? कास्ट कटिंग का पूंजीवादी लाजिक ही क्या संप्रभु लॉजिक है? इसके चलते डेनबरी के हेडक्वार्टर्स से आदेश हो सकते हैं कि फैक्टरी की रेफ्रीजरेशन यूनिट को बंद कर दिया जाए। कि कॉस्टिक सोडा स्क्रबर काम न करे, परवाह नहीं, कि फ्लेयर टॉवर की पाइपलाइन डिस्कनेक्ट हो, परवाह नहीं, वर्कर्स को अंग्रेजी न जानने पर ही इंग्लिश मैनुअल ही दिए जाते रहें, परवाह नहीं। आपरेटर 12 से घटाकर छः कर दो, सुपरवाइज़री पर्सोनेल आधे कर दो, नाइट शिफ्ट पर कोई मेंटेनेंस सुपरवाइज़र न हो, परवाह नहीं, चार साल में MIC के टैंक अलार्म्स न चल रहे हों, परवाह नहीं। वे सेबोटेज की बात कैसे कर सकते हैं जबकि तीन साल पहले ही प्लांट को अनसेफ घोषित किया जा चुका था।

कालरात्रि नामक इस नाटक में जो रात है, वह औद्योगिक निशाचरों की रात है। मुझे 1998 के एक नाटक कालरात्रि की याद आती है- दुलेन्द्र भौमिक की कथा पर उज्जल चट्टोपाध्याय के निर्देशन में खेला गया वह नाटक यदि एक व्यक्तिगत त्रासदी था, अंतःकरण की आपदा तो यह कालरात्रि नामक नाटक इंडस्ट्रिअल सोसायटी की त्रासदी को सामने लाता है। याद करें डेनबरी में कंपनी के प्रवक्ता का वह वाक्य : Something like this happens, and people every where begin seeing dollar signs in front of their eyes. कि कहीं ऐसा कुछ हो जाए तो लोगों की आंखों के सामने डॉलर मुद्राएं नाचने लगती हैं। उनकी यह टिप्पणी मुआवजे की मांग पर थी, लेकिन किसी ने उन मुद्राराक्षसों को पलटकर यह नहीं बोला कि यह हुआ भी तो इसलिए कि कंपनी के कर्ताधर्ता की आंखों के आगे डॉलर मुद्राएं नाच रही थीं।

और जब तक इस कलयुग की इस मोहिनी का यह विपर्यय चलता रहेगा, भोपाल कभी 2004 में स्काटलैंड की प्लास्टिक फैक्टरी में घटेगा, या 1993 में थाईलैंड की ट्वाय फैक्टरी में 188 औरतों को मारेगा, कभी चेर्नोबिल तो कभी 3 माइल आइलैंड घटित होंगे, कभी वेस्ट वर्जीनिया की कोल माइन में 78 लोग मरेंगे, कभी जापान में मिनामाटा त्रासदी घटेगी। स्वयं यूनियनकार्बाइड कारपोरेशन को टॉक्सिक केमिकल स्पिल्स के झटके लगते रहेंगे। आखिरकार 1985 से 1990 के बीच दुनियाभर के इसके प्लांटो में 2000 बार से ज्यादा लीक हुई हैं। भले ही हत्यारा इंडस्ट्रियजिल्म अपना नाम बदल ले, शूर्पणखाएं मोहिनी वेश में आ जाएं, कालरात्रि नहीं टलेगी। आशी जी ने कालरात्रि नामक अपने इस नाटक के जरिए यही संदेश देना चाहा है और सुधी श्रोताओं और दर्शकों के जागने की आशा आशी जी ने व्यक्त की है। क्यों न करें, ग्लोबल कैपिटल की इस निशाचर-निशि में वही एक सनातन आश्वासन-सा है जो गूंजता है : या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।

शुभरात्रि, कालरात्रि।

मनोज श्रीवास्तव . प्रमुख सचिव संस्कृति . जनसंपर्क . म.प्र.शासन . न्यासी सचिव . भारत भवन . भोपाल